

6-परिवर्तन के महान क्षण

अध्याय 1: परिवर्तन के महान क्षण

प्रश्न 1: बीसवीं सदी के अंत तक समय में क्या बदलाव आया और पहले भाव-संवेदनाओं का क्या महत्व था?

उत्तर: बीसवीं सदी के अंत तक समय में सचमुच बदलाव आ गया है। पहले भाव-संवेदनाएँ बहुत समर्थ होती थीं। उदाहरण के लिए, मिट्टी के द्रोणाचार्य एकलव्य को धनुष विद्या में प्रवीण कर देते थे। मीरा के बुलाने पर कृष्ण स्वयं नृत्य करने आ जाते थे। गांधारी की पतिव्रत भावना से उनकी दृष्टि में इतनी शक्ति भर गई थी कि दुर्योधन का शरीर अष्ट-धातु का हो गया था। शाप-वरदान भी शस्त्र प्रहारों और बहुमूल्य उपहारों जैसा काम करते थे, जो भाव-संवेदनाओं का चमत्कार था।

अध्याय 2: विज्ञान और प्रत्यक्षवाद ने क्या सचमुच हमें सुखी बनाया है?

प्रश्न 1: वर्तमान युग में प्रत्यक्षवाद की प्रमुख मान्यताएँ क्या हैं?

उत्तर: वर्तमान युग में भौतिक जगत ही सब कुछ रह गया है, आत्मा तिरोहित हो गई है। प्रत्यक्षवाद यह मानता है कि जो हाथों में देखा और दिखाया जा सके वही सच है, और जिसके लिए गहराई में उतरना पड़े वह झूठ है। इस मान्यता के कारण आत्मा और परमात्मा दोनों की मान्यता समाप्त कर दी गई है। भौतिक विज्ञान प्रत्यक्ष पर निर्भर करता है और केवल उसी को सच मानता है जो प्रत्यक्ष देखा जाता है।

प्रश्न 2: भौतिक विज्ञान और प्रत्यक्षवाद के क्या लाभ और हानियाँ बताई गई हैं?

उत्तर: भौतिक विज्ञान और प्रत्यक्षवाद का लाभ यह हुआ है कि अंध-विश्वास जैसी मूढ़-मान्यताओं के लिए गुंजाइश नहीं रही। इसकी हानि यह हुई कि नीतिमत्ता, आदर्शवादिता और धर्म-धारणाओं को भी अस्वीकार कर दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप, मानवी गरिमा के अनुरूप अनुशासन लगभग समाप्त होने जा रहा है। प्रत्यक्षवाद ने सुविधा-संवर्धन के लिए नए आधार दिए हैं, लेकिन तात्कालिक लाभ न मिलने पर आत्मा, परमात्मा, धर्म जैसी मान्यताओं को व्यर्थ माना जाने लगा है।

प्रश्न 3: प्रत्यक्षवाद ने मनुष्य के नैतिक मूल्यों पर क्या प्रभाव डाला है?

उत्तर: प्रत्यक्षवाद ने मनुष्य को एक चलता-फिरता पौधा या वार्तालाप करने वाले पशु के समान माना है। इसके कारण प्राणीवध में निर्दयता और निष्ठुरता का आरोपण अब असमंजस का विषय नहीं रहा। यह अपराधों के लिए द्वार खोलता है क्योंकि इसमें तुरंत लाभ मिलता है, जबकि दूसरों की हानि होती है। यौन सदाचार पर कोई दबाव नहीं रहता, और समर्थ मनुष्य अपने असमर्थ जनों का शोषण करने में नहीं हिचकते, ठीक वैसे ही जैसे बड़ी मछली छोटी मछली को खाती है।

प्रश्न 4: नीत्शे और प्रत्यक्षवादियों ने धर्म के बारे में क्या विचार व्यक्त किए हैं?

उत्तर: मनीषी नीत्शे ने घोषणा की है कि तर्क के इस युग में पुरानी मान्यताओं पर आधारित ईश्वर मर चुका है और उसे इतनी गहराई से दफनाया गया है कि भविष्य में उसके जीवित होने की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। प्रत्यक्षवादी बौद्धिक बहुमत ने धर्म को अफीम की गोली कहा है। उनका मानना है कि यह पिछड़ों को त्रास सहते रहने और विपन्नता के विरुद्ध मुँह न खोलने के लिए बाधित करता है, और अनाचारियों को निर्भय बनाता है।

अध्याय 3: नीतिरहित भौतिकवाद से उपजी दुर्गति

प्रश्न 1: विज्ञान द्वारा उत्पन्न सुविधाएँ समाज में असमानता को कैसे बढ़ा रही हैं?

उत्तर: विज्ञान ने समर्थ जनों के लिए अनेक लाभ के आधार उत्पन्न किए हैं। लेकिन ये सुविधाएँ बहुत कम लोगों, मुश्किल से दस हजार के पीछे दस लोगों, के हाथों में सीमित होकर रह गई हैं। लेख के अनुसार, इन लोगों ने जो कुछ भी बटोरा है, वह दुर्बल और भोले भावुकों के अधिकारों का अपहरण करके ही एकत्रित हुआ है। इससे समाज में अमीरों और गरीबों के बीच खाई बढ़ गई है, और यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या यह प्रगति वास्तविक है या शोषण का कुचक्र है।

प्रश्न 2: नीतिरहित भौतिकवाद ने समाज में किन समस्याओं को जन्म दिया है?

उत्तर: नीतिरहित भौतिकवाद ने नैतिक मूल्यों, जैसे नीति, धर्म, कर्तव्य, सदाशयता, शालीनता और समता को अस्वीकार कर दिया है। इससे सामर्थ्यवानों को मर्यादा में रहने या शालीनता अपनाने के लिए कोई बाध्य नहीं कर पाता। समाज में अभाव कृत्रिम रूप से उत्पन्न हुए हैं क्योंकि कुछ लोगों ने विज्ञान और प्रत्यक्षवाद की मान्यता के अनुरूप अधिक संपत्ति बटोर ली है। इससे दुर्बलों का शोषण बढ़ा है, और समर्थ लोग उद्दण्ड होकर दैत्य-दानव बन गए हैं।

प्रश्न 3: विज्ञान और औद्योगीकरण ने पर्यावरण और मानवीय जीवन पर क्या नकारात्मक प्रभाव डाले हैं?

उत्तर: औद्योगीकरण के नाम पर बने कारखानों ने वायु और जल प्रदूषण को बढ़ा दिया है। अणु शक्ति की बढ़ोत्तरी ने वातावरण को विकिरण से भर दिया है, जिससे भावी पीढ़ियों के अपंग पैदा होने की आशंका है। ऊर्जा के अत्यधिक उपयोग से संसार का तापमान बढ़ा है, जिससे हिम प्रदेश पिघल सकते हैं और ओजोन परत फट सकती है। रासायनिक खाद और कीटनाशक पृथ्वी की उर्वरता को विषाक्त बना रहे हैं। इससे खनिज भी तेजी से समाप्त हो रहे हैं और मनुष्य सामूहिक आत्म-हत्या की ओर बढ़ रहा है।

प्रश्न 4: लेखक के अनुसार, यदि विज्ञान के साथ सद्ज्ञान का समावेश होता तो क्या स्थिति होती?

उत्तर: लेखक के अनुसार, यदि विज्ञान के साथ सद्ज्ञान का समावेश भी रह सका होता तो भौतिक और आत्मिक सिद्धांतों पर आधारित प्रगति सामने आती। इस प्रगति का लाभ हर किसी को समान रूप से मिल सका होता। ऐसा होने पर न कोई अनीति बरतता और न किसी को उसे सहने के लिए विवश होना पड़ता। विज्ञान ने जहाँ अद्भुत साधन उत्पन्न किए, वहीं दूसरे हाथ से उन्हें छीन भी लिया, जिससे कुछ समर्थ जन्नत का मजा लूटते रहे और बाकी सभी सड़ते रहे।

अध्याय 4: भौतिकवाद की उलटबाँसियाँ

प्रश्न 1: लेखक ने भौतिकवाद को "उलटबाँसियाँ" क्यों कहा है?

उत्तर: लेखक ने भौतिकवाद को "उलटबाँसियाँ" इसलिए कहा है क्योंकि इसमें विष को अमृत और हानि को लाभ समझा जाने लगा है। लोग तात्कालिक लाभ को ही सब कुछ मानकर कुमार्ग पर चल रहे हैं, यह सोचे बिना कि उसका परिणाम कल या परसों क्या होगा। सच्चाई का रास्ता अपनाने वालों को घाटे में और अनाचारियों को फायदे में समझा जाता है। यह उल्टी समझ इतनी गहरी हो गई है कि अनुचित रीति से उठाया गया लाभ अंत में दुर्व्यसनों, अपयश और पतन की ओर ले जाता है, पर लोग यह दूरदर्शिता नहीं रखते।

अध्याय 5: असमंजस की स्थिति और समाधान

प्रश्न 1: लेखक के अनुसार, वर्तमान समस्याओं के लिए किसे दोषी ठहराया गया है और इसका मूल कारण क्या है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, इन दिनों हर क्षेत्र में फैली समस्याओं, अवांछनीयताओं और विडंबनाओं के लिए प्रत्यक्षवाद की पृष्ठभूमि पर जन्मा भौतिकवाद दोषी है। भौतिकवाद ने नैतिक मूल्यों की उपयोगिता और आवश्यकता को मानने से इनकार कर दिया है। जन-समुदाय ने प्रत्यक्ष एवं तात्कालिक लाभ को ही सब कुछ मान लिया है, जिससे नीति, सदाचार, उदारता और संयम जैसे उच्च आदर्शों के लिए कोई जगह नहीं बची है।

प्रश्न 2: सर्वजनीन सुख-शांति के लिए क्या आवश्यक है?

उत्तर: सर्वजनीन सुख-शांति के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य पारस्परिक श्रद्धा, सद्भावना, सहकारिता और नीति-निष्ठा अपनाए। इनके बिना पारस्परिक सद्भाव और स्नेह-संवेदना उभर नहीं सकती। मनुष्य को अपना ही नहीं, दूसरों का भी हित सोचना चाहिए, न्याय को प्रश्रय देना चाहिए और अनीति के आधार पर मिली सुविधाओं को अस्वीकार करना चाहिए। इससे कम में काम नहीं चलता और इससे अधिक की कोई आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न 3: लेखक ने वर्तमान "असमंजस की स्थिति" का क्या समाधान सुझाया है?

उत्तर: लेखक ने इस असमंजस की स्थिति का समाधान यह सुझाया है कि भौतिक विज्ञान को अध्यात्म तत्व ज्ञान के साथ जुड़ना चाहिए। इसके साथ ही, अध्यात्मवाद का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसे प्रत्यक्षवाद की कसौटी पर भी खरा सिद्ध किया जा सके। उनका मानना है कि जन कल्याण अध्यात्म पर ही निर्भर हो सकता है। यह भी कहा गया है कि अध्यात्म में खोटा अनुपयुक्त प्रयोगों के कारण आया है, जहाँ असली के स्थान पर नकली ने ले ली है।

प्रश्न 4: वर्तमान प्रचलित अध्यात्म की क्या कमियाँ बताई गई हैं?

उत्तर: वर्तमान प्रचलित अध्यात्म सिद्धांतों और प्रचलनों में विकृतियों और अवांछनीयता का अनुपात इतना अधिक घुस पड़ा है कि कसौटी पर कसने पर वे भी छोटे सिक्के की तरह अप्रामाणिक ही सिद्ध होते हैं। लाखों संत-साधु, भजनानन्दी और कर्मकाण्डी पूजा व्यवसायी अपने व्यक्तित्व को इतना गया-गुजरा बना बैठे हैं कि उनमें उत्कृष्टता और विशिष्टता शेष नहीं दिखती। लेखक को लगता है कि जिस प्रकार के लांछन भौतिकवाद पर लगाए जाते हैं, उससे भी अधिक वर्तमान अध्यात्मवाद पर लगाए जा सकते हैं।

अध्याय 6: लेखक का निजी अनुभव

प्रश्न 1: लेखक ने अपने निजी अनुभव में "परिष्कृत अध्यात्म" की खोज क्यों की?

उत्तर: लेखक ने अपने छोटे-से जीवन और साधनों का उपयोग यह खोजबीन करने के लिए किया कि जब शरीर से प्राण श्रेष्ठ है, तो फिर भौतिक संपदा की तुलना में प्राण चेतना को वरिष्ठता का गौरव क्यों न मिलना चाहिए। वे अगले दिनों सतयुग की वापसी के लिए एक नया प्रयत्न करना चाहते थे। उन्होंने अपनी काया-कलेवर को ही प्रयोगशाला बनाया, यह देखने के लिए कि क्या परिष्कृत अध्यात्म व्यक्ति और संसार के लिए उपयोगी हो सकता है।

प्रश्न 2: आत्मिकी के दो प्रमुख पक्ष क्या हैं और वर्तमान में लोग किसमें भ्रमित हैं?

उत्तर: आत्मिकी का प्रथम पक्ष साधक का परिष्कृत व्यक्तित्व है, और दूसरा पक्ष साधना-उपासना स्तर का उपक्रम है। लेखक के अनुसार, जीवन साधना को स्वास्थ्य और कर्मकाण्डपरक उपचारों को शृंगार स्तर का कहा

जा सकता है। हालांकि, इन दिनों लोगों को ऐसा कुछ बता दिया गया है कि जीवन साधना की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है, और केवल पूजापरक कर्मकाण्डों के बल पर ही सारी महत्ता प्राप्त की जा सकती है।

प्रश्न 3: दिव्य मार्गदर्शक ने अध्यात्म की सफलता के लिए क्या संकेत दिया?

उत्तर: दिव्य मार्गदर्शक ने संकेत दिया कि अध्यात्म को अंकुरित, पल्लवित एवं पुष्पित होने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि इस प्रयोजन में प्रवेश करने वाले का व्यक्तित्व उत्कृष्टता से सुसम्पन्न हो। इसके पश्चात् ही उपासनापरक कर्मकाण्डों की कुछ उपयोगी प्रतिक्रिया उपलब्ध होती है। यदि मनोभूमि और जीवनचर्या गंदगी से भरी हो, तो मंत्र और पूजा की प्रक्रिया प्रायः निरर्थक ही सिद्ध होगी, और समय, श्रम तथा साधन सामग्री व्यर्थ गँवाने के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं लगेगा।

प्रश्न 4: लेखक ने गायत्री मंत्र की उपासना के बारे में क्या बताया है?

उत्तर: लेखक को प्रारंभिक दिनों में ही यह विश्वास जम गया था कि आदि शक्ति के नाम से जानी जाने वाली गायत्री की श्रेष्ठता-वरिष्ठता असंदिग्ध है। उन्हें उपासना क्रम सरल और उत्साहवर्धक लगा। अस्सी वर्ष की आयु तक यह मान्यता और श्रद्धा निरंतर बढ़ती ही रही। उन्होंने बताया कि ईश्वर के प्रति सुनिश्चित आत्मीयता की अनुभूति 'उपासना' है, जीवन में शालीनता 'साधना' है, और करुणा व उदारता 'आराधना' है, जो मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाती है।

प्रश्न 5: लेखक के अनुसार, सच्चे अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय क्यों आवश्यक है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, सच्चे अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय आवश्यक है ताकि एक प्राणवान दुनिया समग्र शक्ति के साथ नए सिरे से उद्भूत हो सके। विज्ञान केवल जड़ पदार्थों तक पहुँचता है, जबकि अध्यात्म जड़ और चेतना दोनों को प्रभावित कर सकता है। यदि विज्ञान के प्रत्यक्षवाद को और अध्यात्म को सशक्त एवं प्रत्यक्ष फल देने वाला माना जा सके, तो यह सोना और सुगंध के मिल जाने जैसा सुयोग होगा। इससे न तो विज्ञान झगड़ालू रहेगा और न अध्यात्म से जुड़ी कुरूपता के लिए कोई गुंजाइश बचेगी।

अध्याय 7: त्रिधा भक्ति एवं उसकी अद्भुत सिद्धि

प्रश्न 1: लेखक के अनुसार, "महासतयुग" की स्थापना कैसे संभव है?

उत्तर: लेखक का मानना है कि यदि उपेक्षित और विडंबनाग्रस्त अध्यात्म को पुनर्जीवित किया जा सके, तो विश्व चेतना के साथ एक उच्चस्तरीय माहौल जुड़ सकता है। यदि बड़े हुए विज्ञान के चरणों को आध्यात्मिक प्रगति के साथ जोड़ा जा सके, तो हम भूतकाल के सतयुग की अपेक्षा और भी अच्छी स्थिति में पहुँच सकते हैं। इस नए आधार को संजोकर लेखक का विश्वास है कि हम अगले दिनों अपनी इसी धरती पर और भी ऊँचे स्तर का "महासतयुग" उतारकर रहेंगे।

प्रश्न 2: लेखक ने अपने व्यक्तिगत जीवन में किस प्रकार की व्रतशीलता अपनाई?

उत्तर: लेखक ने आरंभ से ही यह व्रत धारण किया कि परम सत्ता के अनुग्रह से जो कुछ भी मिलेगा, उसे उसी के विश्व उद्यान को अधिक श्रेष्ठ, समुन्नत और सुसंस्कृत बनाने के लिए ही खर्च किया जाएगा। उनका निजी जीवन केवल ब्राह्मणोचित निर्वाह तक सीमित रहा। उन्होंने न्यूनतम आहार-विहार, वस्त्र-विन्यास और रहन-सहन अपनाया। उनकी महत्वाकांक्षा न्यूनतम थी और आत्म-प्रदर्शन से भी वे दूर रहे, किसी सम्मान या नाम छपने की ललक नहीं रखी।

प्रश्न 3: लेखक को अपनी तपस्या और साधना के फलस्वरूप कौन सी अद्भुत सिद्धियाँ प्राप्त हुईं?

उत्तर: लेखक को अपनी तपस्या के फलस्वरूप कई अद्भुत सिद्धियाँ प्राप्त हुईं। उन्होंने इतनी बड़ी मात्रा में युग

साहित्य का सृजन किया, जिसका अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ, जो सामान्य बुद्धि के अनुसार एक व्यक्ति के लिए पाँच जन्मों का कार्य है। दूसरा, उन्होंने नव सृजन में कारगर भूमिका निभाने योग्य साथी-सहयोगियों का एक विशालकाय परिकर एकत्रित किया, जिनकी संख्या बढ़कर पच्चीस लाख हो गई है। तीसरी सिद्धि है दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष की असाधारण रणनीति और हजारों प्रज्ञा केंद्रों की स्थापना।

प्रश्न 4: लेखक ने अपनी सहायता के संदर्भ में किस सिद्धांत का पालन किया?

उत्तर: लेखक ने सहायता के लिए कभी किसी के आगे हाथ नहीं पसारा। यह किसी अहंकार प्रदर्शन का भाव नहीं था, बल्कि यह एक प्रयोग परीक्षण था कि यदि भगवत् प्रयोजन के लिए कहीं से कोई प्रामाणिकता उभरे तो उसकी शक्ति और सम्पदा कितनी बढ़ जाती है। उन्होंने हनुमानजी और गंगा के उदाहरण दिए, यह बताने के लिए कि कैसे बिना याचना के भी आवश्यकताएँ पूरी होती हैं, और कैसे सुदामापुरी द्वारिकापुरी में बदल सकती है।

अध्याय 8: सच्चे अध्यात्मवाद में निहित विलक्षण शक्ति

प्रश्न 1: लेखक ने किस प्रकार के अध्यात्म को "सच्चा अध्यात्मवाद" कहा है और उसके क्या लक्षण बताए हैं?

उत्तर: लेखक ने उस अध्यात्म को सच्चा अध्यात्मवाद कहा है जो लोकसेवी हो। सच्चा अध्यात्मवादी जन साधारण की समस्याओं के समाधान में अध्यात्म का प्रयोग करता है। यह केवल व्यक्तिगत लाभ, स्वर्ग-मुक्ति या चमत्कार प्रदर्शन तक सीमित नहीं रहता। सच्चा अध्यात्म आत्मबल उत्पन्न करता है। इसमें बुराइयों से निपटने और अच्छाइयों को बढ़ाने की असाधारण शक्ति होती है, जो भौतिक विज्ञान की उपलब्धियों से भी तुलना कर सके और वर्तमान पतनोन्मुख प्रवाह को रोक सके।

प्रश्न 2: लेखक के अनुसार, आत्मबल की क्या विशेषताएँ हैं और यह कब उपेक्षणीय नहीं होता?

उत्तर: लेखक के अनुसार, आध्यात्मिक साधना से उपजने वाला आत्मबल उपेक्षणीय नहीं है। यह न तो अप्रामाणिक है और न छद्म। आत्मबल तब अपनी महत्ता खो देता है जब उसके साथ जुड़े सिद्धांतों को भुलाकर केवल कुछ मंत्र-यंत्रों से ही गगनचुंबी अपेक्षाएँ की जाने लगती हैं और उनके सफल न होने पर निराशा व नास्तिकता उभरती है। आत्मबल संसार के समस्त बलों की तुलना में अधिक सामर्थ्यवान है और विज्ञान की पहुँच मात्र जड़ पदार्थों तक सीमित है जबकि अध्यात्म चेतना को भी प्रभावित करता है।

प्रश्न 3: लेखक ने वर्तमान में किस प्रकार की भक्ति की आवश्यकता पर जोर दिया है?

उत्तर: लेखक ने वर्तमान में ऐसी भक्ति की आवश्यकता पर जोर दिया है जो शक्ति से भी परिपूर्ण हो। उनका मानना है कि भक्ति का संबंध केवल भाव-संवेदनाओं तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि उसकी पूर्णता शक्ति से संयुक्त होने में है। ऐसी भक्ति में इतनी शक्ति होनी चाहिए जो भौतिक विज्ञान द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली उपलब्धियों की तुलना कर सके और अब तक की विकृतियों को उलट कर उपयोगी वातावरण प्रस्तुत कर सके। यह इस लोक को सुधारने, सँभालने, उठाने और सुख-शान्तिमय बनाने में सक्षम होनी चाहिए, न कि केवल परलोक की चर्चा करे।

अध्याय 9: भक्ति से जुड़ी शक्ति

प्रश्न 1: लेखक ने सहस्रकुण्डीय महायज्ञ के सफल प्रयोग से क्या सीखा?

उत्तर: 1958 के सहस्रकुण्डीय महायज्ञ के सफल प्रयोग परीक्षण ने लेखक की श्रद्धा-विश्वास को असंख्य गुना बढ़ा दिया। इस अनुभव से उन्हें यह समझ आया कि भक्ति के साथ शक्ति का भी अविच्छिन्न सामंजस्य है। साहित्य सृजन, संगठन, केन्द्रों की खर्चीली व्यवस्था और अभावग्रस्तों की सहायता जैसे बड़े कार्य ऐसे संपन्न

हुए, मानो वे किसी दूसरे ने किए हों और उन पर श्रेय अनायास ही लद गया हो। यह अनुभव दर्शाता है कि निर्देशक शक्ति अपने संकेतों पर चलने वाले समर्पित व्यक्ति के लिए आवश्यक व्यवस्था करती है।

प्रश्न 2: लेखक ने किस प्रकार के "युग परिवर्तन" की बात कही है और उसकी विशेषताएँ क्या हैं?

उत्तर: लेखक ने एक ऐसे "युग परिवर्तन" की बात कही है जिसे इक्कीसवीं सदी के उज्ज्वल भविष्य की परिकल्पना और महाक्रान्ति की अभूतपूर्व परियोजना माना जा सकता है। यह परिवर्तन इतना व्यापक, उलझा हुआ और विस्तृत है कि इसे अब तक के सुधार-परिवर्तनों की तुलना में अद्भुत, अनुपम और अभूतपूर्व कहा जा सकता है। इसके लिए हल्के-फुल्के प्रयास नहीं, बल्कि अत्यंत प्रबल, प्रचंड, सशक्त और व्यापक प्रयासों की आवश्यकता होगी। यह परिवर्तन अदृश्य जगत और सूक्ष्म स्तर का भी है, क्योंकि इसकी जड़ें चेतना क्षेत्र के सूक्ष्म जगत में गहराई तक घुसी हुई हैं।

अध्याय 10: आश्वासन एवं अनुरोध

प्रश्न 1: लेखक ने अपने एकांत साधना में जाने पर अपने अनुयायियों को क्या आश्वासन दिया है?

उत्तर: लेखक ने अपने अनुयायियों को आश्वासन दिया है कि सूक्ष्म स्तर की गतिविधियाँ अपना लेने पर भी वे अपने प्रत्यक्ष उत्तरदायित्वों को निभाने में समर्थ रहेंगे। उन्होंने स्पष्ट किया कि शांतिकुंज उनके प्रत्यक्ष शरीर के रूप में विद्यमान है, जिससे संबंधित लोगों को आवश्यक प्रेरणाएँ और प्रकाश किरणें मिलती रहेंगी। लेखक ने कहा कि दिव्य तत्व कभी मरते नहीं, और शरीर बदलने पर आत्मसत्ता का अस्तित्व नहीं बदलता। बल्कि, शरीर का भार हट जाने से वह और भी अधिक गतिशीलता का परिचय देने लगता है।

प्रश्न 2: स्वामी रामतीर्थ के "मौत के नाम खत" का सार क्या है और यह लेखक के दृष्टिकोण से कैसे मेल खाता है?

उत्तर: स्वामी रामतीर्थ के "मौत के नाम खत" का सार यह है कि शरीर का भार लदा रहने से वे वह नहीं कर पा रहे थे जो कर सकते थे, और इस वजन के हटते ही वे हवा, चाँदनी, किरणों, वसंत वर्षा के साथ मिलकर अधिक उपयोगी और प्रसन्नता भरे उल्लास का रसास्वादन कर सकेंगे। यह लेखक के दृष्टिकोण से मेल खाता है, जो मानते हैं कि शरीर न रहने पर समर्थता और सक्रियता और भी अधिक बढ़ जाती है। लेखक का भी विश्वास है कि वे शरीर के बिना भी बहुत कुछ करते रहेंगे और अपने प्रज्ञा परिजनों को अधिक प्यार और सहयोग दे सकेंगे।

प्रश्न 3: लेखक ने विज्ञान की तुलना में अध्यात्म की सामर्थ्य को कैसे स्पष्ट किया है?

उत्तर: लेखक ने स्पष्ट किया है कि अदृश्य अध्यात्म की सामर्थ्य दृश्यमान विज्ञान की तुलना में कम नहीं है, बल्कि आत्मबल संसार के समस्त बलों की तुलना में अधिक सामर्थ्यवान है। विज्ञान की पहुँच केवल जड़ पदार्थों तक है, जबकि अध्यात्म जड़ ही नहीं, चेतना को भी प्रभावित और परिष्कृत करने में समर्थ है। अध्यात्म को अमृत, पारस, कल्पवृक्ष और कामधेनु जैसे आलंकारिक नामों से संबोधित किया जाता है, जो उसकी विलक्षण शक्ति और सच्चाई से जुड़े हैं।

अध्याय 11: हमारी भविष्यवाणी

प्रश्न 1: लेखक के अनुसार, भविष्य में किन समस्याओं का समाधान होगा और कैसे?

उत्तर: लेखक के अनुसार, भविष्य में प्रचलित दुष्प्रवृत्तियों का उन्मूलन, अभावों का निराकरण और सदाशयता का अभिवर्धन प्रमुख होगा। उनका विश्वास है कि जब चिंतन, चरित्र और व्यवहार में असाधारण मात्रा में उत्कृष्टता का अभिवर्धन होगा, तो सभी समस्याएँ अनायास ही सुलझती चली जाएंगी, जिन्हें इन दिनों सर्वनाशी और खण्ड प्रलय जैसी विभीषिकाएँ माना जा रहा है। इससे सतयुग की वापसी होगी।

प्रश्न 2: इक्कीसवीं सदी के उज्ज्वल भविष्य की क्या कल्पना की गई है?

उत्तर: इक्कीसवीं सदी में विज्ञान का नाम भौतिक विज्ञान न होकर अध्यात्म विज्ञान हो जाएगा, और प्रकृति ही सभी आवश्यकताओं को पूरा करने लगेगी। अगली शताब्दी में युद्ध, महामारियाँ और जनसंख्या की वृद्धि से होने वाली वस्तुओं की कमी की चिंता नहीं रहेगी। जागृत नारी अनावश्यक संतानोत्पादन से इनकार कर देगी और अपनी शक्ति को समृद्धि और सद्भावना के लिए नियोजित करेगी। यह नारी प्रधान इक्कीसवीं शताब्दी सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा की संयुक्त शक्ति द्वारा अपनाए गए क्रिया-कलाप जैसी होगी। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों को प्रामाणिक, प्रखर और प्रतिभावान बनाना होगा।

प्रश्न 3: विज्ञान भविष्य में क्यों अनर्थ पैदा नहीं कर पाएगा?

उत्तर: लेखक के अनुसार, विज्ञान भविष्य में अनर्थ पैदा नहीं कर पाएगा क्योंकि खनिज तेल और विद्युत उत्पादन जैसे स्रोत ही सूख जाएंगे। जब ये स्रोत समाप्त हो जाएंगे, तब विज्ञान जीवित कैसे रह सकेगा? लोगों को लौटकर फिर से प्राकृतिक जीवन अपनाना पड़ेगा, जिसमें विकृतियों के अभिवर्धन की कोई गुंजाइश ही नहीं होगी। तब विज्ञान का नाम 'भौतिक विज्ञान' न रहकर 'अध्यात्म विज्ञान' हो जाएगा।